हमारा आधा जीवन तो ये सोचने में निकल जाता है कि हमारे पास क्या है?जबकि जो होता है उसका लाभ भी नहीं ले सकते। –अज्ञात।

विचार-प्रवाह

देहरादून, रविवार, 17 अप्रैल 2022

पेज थ्री

www.page3news.in

बेटी को शादी में दे देना

अब वह हमेशा एक आश्रित रहनेवाली गृहिणी नहीं है बल्कि अपने माता–पिता की देखभाल करने वाली आर्थिक रूप से स्वतंत्र महिला भी है। फिर भी दहेज की मांग की जाती है। क्यों? कारण यह है कि पैतृक संपत्ति पर उसका अधिकारऔर अनुकूल कानून के बावजूद वह उसमें हिस्सेदारी का दावा नहीं करती है।

राधा जोशी।।

'बेटी को शादी में दे देना' की पुरानी व्यवस्था– एक गृहिणी की अवधारणा– पर आधारित थी जिसमें कोई आर्थिक स्वतंत्रता नहीं थी। इसलिए यह पुरानी सामाजिक धारणा के अनुकूल था कि माता–पिता और ससुराल– दोनों उसे भोजन, कपड़ा और आश्रय जैसे निर्वाह के साधन प्रदान करे और उससे पूर्ण निष्ठा की मांग करे। पुरानी व्यवस्था में, दहेज या 'दायज' शादी के समय बेटी को स्वैच्छिक उपहार था क्योंकि शादी के बाद, माता–पिता के घर से लड़की के लिए गर्भनाल काट दी जाती थी और उसके बाद माता–पिता के घर में उसका कोई आर्थिक दावा नहीं होता था। उसे अपनी पैतृक संपत्ति विरासत में नहीं मिलती थी और अपने माता–पिता की देखभाल की भी कोई जिम्मेदारी नहीं थी। शादी के बाद लड़की का आर्थिक अस्तित्व शादी में खो गया था। यह एक पुरुष से अलग था जिसने शादी के साथ, शादी के बिना और शादी के बावजूद पैतृकसंपत्ति पर अपना अधिकार बरकरार रखा था।

आज समय बदल गया है। अब वह हमेशा एक आश्रित रहनेवाली गृहिणी नहीं है बल्कि अपने माता–पिता की देखभाल करने वाली आर्थिक रूप से स्वतंत्र महिला भी है। फिर भी दहेज की मांग की जाती है। क्यों? कारण यह है कि पैतृक संपत्ति पर उसका अधिकारऔर अनुकूल कानून के बावजूद वह उसमें हिस्सेदारी का दावा नहीं करती है। वह ससुराल की संपत्ति में हिस्सेदारी का दावा करती है। इससे ससुराल पक्ष के मन में आक्रोश और असुरक्षा की भावना पैदा होती है। वे उसे अपनी संपत्ति के भावी दावेदार के रूप में स्वीकार करने से पहले एकमुश्त दहेज की मांग करते हैं। इसलिए संपत्ति कानूनों को सख्ती से लागू किया जाना चाहिए ताकि लड़की को माता–पिता की संपत्ति विरासत में मिल सके और वह संपत्ति पति को न मिले। फिर उसे अपने भाइयों की तरह अपने माता–पिता देखभाल भी करनी चाहिए। यह उपाय दहेज के मुद्दों और परिणामों का मुकाबला करेगा।

संक्षेप में, विवाह दो परिवारों का मिलन होना चाहिए न कि किसी महिला को माता–पिता के परिवार से अलग करना। शादी के बाद, उसकी संपत्ति उसी की रहनी चाहिए जिससे वह अपना और अपने माता–पिता का भरण–पोषण कर सके, जैसे एक आदमी अपनी संपत्ति को अपने और अपने परिवार के कल्याण के लिए रखता है। पति और पत्नी अपने परिवार के लिए एक साझा कोष बना सकते हैं लेकिन उन्हें माता–पिता और सास–ससुर दोनों की देखभाल करनी चाहिए। फिर असफल विवाह के मामले में लड़की को गुजारा भत्ता के लिए संघर्ष नहीं करना पड़ेगा। यह उपाय पारिवारिक अदालतों पर दबाव कम करने के मुद्दों का मुकाबला करेगा।

एक और सुधार चाहिए। विवाह में एक साथी को बिल्कुल शक्तिशाली और दूसरे को बिल्कुल कमजोर नहीं बनाना चाहिए। पत्नी को साथी की बेवफाई का मुकाबला करने के लिए कानूनी शक्ति देना होगा। आज एक विवाहित पुरुष के पास ऐसे अधिकार हैं जो पत्नी को उपलब्ध नहीं हैं।

दृष्टिकोण

अशोक वोहरा।

दृष्टिकोण से, दुनिया को आदेश के स्थान के रूप में देखा गया था और अराजकता का नहीं, जहां प्राकृतिक कानून घटनाओं के संचालन के लिए जिम्मेदार थे, न कि ओलिंप के देवताओं की बेतुकी इच्छाओं और प्रतिद्वंद्वियों के लिए, जो तब तक पूरी दुनिया में तौला गया था। जेनोफेनेस के विचारों को एक से अधिक तरीकों से क्रांतिकारी माना जाता था। उन्होंने विश्वासों में बदलाव और दृष्टिकोण में अधिक गहराई से प्रतिनिधित्व किया। उन्होंने होमर और हिसोड की कविताओं में दर्शायी गई सांस्कृतिक परंपराओं को धराशायी करने के लिए फेंक दिया, जब तक कि उस तारीख को निर्विवाद सत्य का स्रोत नहीं माना जाता था। जेनोफेनेस के लिए, हम सत्य की खोज की कठिनाई पर प्रतिबिंब की शुरुआत का भी श्रेय देते हैं और संदेहपूर्ण परंपरा है कि पूर्ण ज्ञान प्राप्त नहीं किया जा सकता है। यह उनका गद्य सत्य, ज्ञान और विश्वास के बीच अंतर करने के लिए आमंत्रित करता है।

संपादकीय

असली बदला

दूसरे विश्व युद्ध के बाद किसी ने एक जापानी नागरिक से पूछा कि अमेरिका ने आप पर न्यूक्लियर बम तक गिरा दिए। आपके दो शहर पूरी तरह तबाह कर दिए। क्या आप लोगों को कभी दिल नहीं करता कि आप भी अमेरिका को उसी तरह बर्बाद कर दें? तो उस जापानी शख्स का जवाब था कि अमेरिका राष्ट्रपति जब टीवी पर भाषण देता है और हम देखते हैं कि उसके पीछे सोनी का स्पीकर पड़ा है। उसके कमरे में हिताची का एसी लगा है और उसी कमरे में तोशीबा की स्क्रीन लगी है, तो यही जापान की अमेरिका पर जीत है! यही हमारा उनसे असली बदला है। जो शख्स या कौमें रचनात्मकता से प्रेरित होती हैं उनके बदलों में भी विध्वंस नहीं, रचनात्मकता होती है। और कश्मीर से निकाले जाने के बाद कश्मीरी पंडितों ने भी हिंसा का रास्ता न अपनाकर रचनात्मक तरीके से पूरी दुनिया में खुद को साबित कर इस विचार का सही साबित किया है। स्टीवन स्पीलबर्ग की फिल्म मशहूर फिल्म है म्यूनिख। जो म्यूनिख ओलंपिक में 11 इजराइली एथलीटों की हत्या के बाद चलाए गए इजराइली ऑपरेशन पर आधारित है। लेकिन बीच ऑपरेशन में उनमें एक एजेंट भारी मानसिक तनाव में चला जाता है। लेकिन कश्मीर फाइल्स और म्यूनिख में मूल फर्क ये है कि म्यूनिख एक त्मअमदहम जेतपससमत है। वहां बदला लेने की बात थी और कश्मीर फाइल्स तो बदले की नहीं, एक वर्ग के साथ हुए कत्लेआम की बात करती है। वो कत्लेआम जिस बारे में 32 सालों बाद उसका अपना ही देश नहीं जानता था! जिसके दर्द से उसके ही लोग वाकिफ नहीं थे। जिसकी पीड़ा से पूरी दुनिया अंजान थी। इसलिए फिल्म को प्रोपेगेंडा कहकर उसमें साजिश मत तलाशिए। उसे कोसिए मत। उससे मुंह मत मोड़िए। और अगर आप ऐसा करेंगे तो गोल–गोल घूम कर वहीं पहुंच जाएंगे जहां 32 साल पहले थे। और ये वक्त रुकने का नहीं, आगे बढ़ने का है। वैसे भी बहुत देर हो चुकी है।

थिएटर्स में भारत मां की जयकार के नजारे लगाए जा रहे हैं। फिल्म के बाद पूरा ह०ल अपने आप राष्ट्रगान गा रहा है। सोशल मीडिया पर लोग अनजान लोगों को फ्री में फिल्म दिखाने का अ०फर दे रहे हैं।

अपने ही देश में कैसी तकलीफों से गुजरे

नीरज बधवार ।।

जबसे 'कश्मीर फाइल्स' फिल्म रिलीज हुई है कुछ सवाल बार–बार पूछे जा रहे हैं। कुछ लोगों का कहना है कि ये फिल्म मुसलमानों के खिलाफ भड़काती है। कुछ की आपत्ति है कि फिल्म में एक भी Positive मुस्लिम किरदार नहीं है। कुछ का कहना है कि फिल्म सभी मुसलमानों को एक ही रंग में दिखाती है। ये सवाल कितने जायज हैं और इसके अलावा फिल्म को लेकर क्या–क्या आपत्तियां हैं, मैं उस पर आऊंगा लेकिन सबसे पहले बात 'कश्मीर फाइल्स' की, जो अब एक फिल्म नहीं, National Emotion बन चुकी है। मझे ये कहने कोई हर्ज नहीं कि पिछले कुछ दिनों में कश्मीर फाइल्स को लेकर जो माहौल देखा है, ऐसा भारतीय फिल्म इतिहास में शायद कभी नहीं देखा गया। थिएटर्स में भारत मां की जयकार के नजारे लगाए जा रहे हैं। फिल्म के बाद पूरा हॉल अपने आप राष्ट्रगान गा रहा है। सोशल मीडिया पर लोग अनजान लोगों को फ्री में फिल्म दिखाने का ऑफर दे रहे हैं। सुबह 6 बजे से लेकर रात 3 बजे तक फिल्म के शो चल रहे हैं।

और आप जानते हैं ऐसा क्यूं हैं? क्या भारत में इससे पहले 'कश्मीर फाइल्स' से अच्छी फिल्म नहीं बनी? क्या लोगों ने इतना शानदार सिनेमा पहले नहीं देखा? नहीं, बिल्कुल नहीं। ऐसा इसलिए क्योंकि 'कश्मीर फाइल्स' सिर्फ फिल्म नहीं है। ये एक पूरी पीढ़ी का या यूं कहूं कि एक देश का 'गिल्ट' है। ऐसा लग रहा है कि इंस्टाग्राम और यूट्यूब में डूबी रहने वाली एक पूरी पीढ़ी फिल्म देखकर एक झटके में नींद से जागी है। इन सालों में उसने सरसरी तौर पर ये तो सुना था कि 90 के दशक में कश्मीरी पंडितों को वहां के कट्टरपंथियों ने उनके घरों से भगा दिया था लेकिन उससे ज्यादा उन्हें कुछ पता नहीं था। और आज जब इस फिल्म ने 32 साल पुरानी उस त्रासदी एक–एक रेशा उधाड़कर रख दिया है तो पूरा देश आत्मग्लानि और सदमें में चला गया है।

सदमा, ये जानने का कि उसके अपने ही लोग अपने ही देश में कैसी तकलीफों से गुजरे और ग्लानि इस बात की कि अपने ही लोगों के साथ इतना जुल्म हुआ और आज तक ये देश पर कुछ कर क्यों नहीं पाया। और आज हर जगह फिल्म को लेकर आप जो इमोशन देख रहे हैं कि वो एक तरह से अपने ही कश्मीरी भाइयों से अपनी बेरुखी के लिए इस देश की माफी है!

फिल्म की तारीफ में तो बहुत कुछ कहा ही जा चुका है। पहला ये कि चलिए इतने सालों बाद किसी ने इस विषय पर फिल्म बनाने की हिम्मत की। बिना किसी लागलपेट के सबकुछ साफ–साफ दिखाया और ऐसा करके फिल्म ने पूरी दुनिया में कश्मीरी पंडितों की त्रासदी के मुद्दे को पुरजोर तरीके से स्थापित कर दिया। लेकिन, एक वर्ग ऐसा भी है जिसकी आपत्ति है कि ये फिल्म मुसलमानों के खिलाफ भड़काती है। इस पर मेरा कहना है कि जब आप असल कहानियोंध्त्रासदियों पर फिल्म बनाते हैं तो आपकी पहली जिम्मेदारी पूरी सच्चाई के साथ उस कहानी को बयान करने की होती है। हकीकत भले ही कितनी ही कड़वी क्यों न हो लेकिन ये सोचकर आप उसमें चाशनी नहीं लपेट सकते कि इसे चाटने से किसी की जबान का टेस्ट खराब हो जाएगा। लेखक–निर्देशक के नाते आपकी पहली और आखिरी जिम्मेदारी घटना के प्रति ईमानदार बने रहने की है। दुनिया को सच बताने के क्रम में आपको नंगा सच दिखाना ही होता है। अब उस नंगे सच को देखकर अगर किसी को खुद पर शर्म आ जाए, तो ये आपकी समस्या नहीं है!

सूडोकु नवताल- 5347

*****

				1			6	
					5			
2		3	9			8		
6							5	
			8		3			
	1							4
		7			1	3		9
			2					
	5			6				

- प्रत्येक पंक्ति में 1 से 9 तक के अंक भरे जाने आवश्यक हैं।
- प्रत्येक आड़ी और खड़ी पंक्ति में एवं 3×3 के वर्ग में किसी भी अंक की पुनरावृत्ति न हो इसका विशेष ध्यान रखें।
- पहले से मौजूद अंकों को आप हटा नहीं सकते।
- पहेली का केवल एक ही हल है।

सूडोकु नवताल -5346 का हल

7	6	8	2	1	9	3	4	5
2	1	5	6	3	4	8	7	9
3	4	9	5	7	8	6	1	2
5	7	4	8	6	1	9	2	3
9	2	1	3	4	5	7	8	6
8	3	6	7	9	2	1	5	4
1	5	3	4	8	5	2	9	7
4	9	7	1	2	3	5	6	8
6	8	2	9	5	7	4	3	1

अपना ब्लॉग

गुजारा भत्ता के मामलों में कमी आएगी

मोहन। पत्नी का उपनाम का परिवर्तन या अपने नाम में पति का नाम जोड़ना भी एक मिथ्या भ्रम है क्योंकि यह न तो उसकी मूल जाति और न ही पहचान को बदलता है। लोग उसके माता–पिता का उपनाम जानने पर जोर देते हैं। विवाह टूटना आम होने के साथ, वैवाहिक उपनाम उसकी पहचान को अस्पष्ट बना देता है। उपनाम केवल उसे माता–पिता के परिवार से अलग करने और पति की संपत्ति में अधिकार बनाने, गुजारा भत्ता में मदद करता है। जब उसकी अपनी आय, माता–पिता की विरासत, अपना उपनाम और पति की संपत्ति होगी तो गुजारा भत्ता के मामलों में कमी आएगी। सच पूछा जाय तो जाति या सम्प्रदाय के उपनाम समाप्त कर देना चाहिये और पत्नी को नाम बदलने पर रोक लगाना चाहिए। इसलिए यदि विवाह को एक प्रतिष्ठित संस्था बनाना है तो उसे दोनों भागीदारों को गरिमा और शक्ति देनी होगी। या तो दूल्हा और दुल्हन दोनों को अपनी वैवाहिक स्थिति का उल्लेख करना चाहिए और निष्ठा बनाए रखना चाहिए या कम से कम एक मंगलसूत्र दिखाना चाहिए।